संवाद

शहर में महिलाओं की सुरक्षा- कैसे?

कल्पना विश्वनाथ

भारतीय महिला आंदोलन ने औरतों के साथ रोज़मर्रा होने वाली हिंसा पर ख़ामोशी तोड़ने और इसे सम्बोधित करने के लिए प्रभावशाली कानून बनाने के लिए सरकार पर दबाव डालने में काफ़ी हद तक सफलता पाई है। घर की चारदीवारी और अंतरंग संबंधों पर चुप्पी तोड़ने से कम से कम इतना तो फायदा हुआ ही है कि आज इस हिंसा का चुनौती देने के लिए औरतें नागरिक और फ़ौजदारी दोनों रास्ते इख्तियार कर सकती हैं। ठीक इसी तरह कार्यस्थल पर यौन हिंसा और यौन उत्पीड़न के मुद्दों पर महिला समूह और अधिक प्रभावशाली व व्यापक कानून की मांग कर रहे हैं जो महिलाओं के विरुद्ध होने वाली हर प्रकार की हिंसा व हनन (जिसमें बलात्कार, उत्पीड़न, छेड़खानी, हमला आदि भी शामिल है), को संबोधित करने में सक्षम हो।

सार्वजनिक जगहों पर औरतों के साथ होने वाली हिंसा यौन हमले और यौन उत्पीड़न रोकने वाले ड्राफ़्ट कानून, दोनों के दायरे में आती है। हाल ही में संसद में पेश किया जाने वाला *फ़ौजदारी कानून संशोधन अधिनियम 2012* के दायरे में खण्ड 354 और 509 दोनों को शामिल किया गया है। सार्वजनिक स्थलों पर होने वाली हिंसा के मामले में इन दोनों खण्डों का इस्तेमाल किया जाता है। खण्ड 354— *महिला के सम्मान का हनन करने के इरादे से किया गया हमला या ज़ोर-ज़बरदस्ती* तथा खण्ड 509— *महिला के सम्मान को नुकसान पहुंचाने के इरादे से उपयोग किए शब्द, व्यवहार या इशारे* यौन हिंसा के विरुद्ध उपयोग किए जा सकते हैं। इन दोनों खण्डों के तहत होने वाले अपराध ज़मानती होते हैं जिनके लिए जुर्माना या एक-दो साल की कैद की सज़ा दी जा सकती है। *कार्यस्थल पर यौन हिंसा रोकथाम अधिनियम* भी पारित होने के बाद औरतों की सार्वजनिक स्थलों पर सुरक्षा के मुद्दे को सम्बोधित करने में कारगर साबित होगा। विशेषतः विश्वविद्यालय परिसर में होने वाली हिंसा और उत्पीड़न से बचाव के लिए इसे लागू किया जा सकेगा।

यहां यह कहना महत्वपूर्ण है कि पुलिस द्वारा औरतों की मदद के लिए कुछ सराहनीय कदम भी उठाए गए हैं जैसे मुंबई व दिल्ली में अश्लील कॉल विरोधी हैल्पलाईन जहां महिला फ़ोन करके अपनी शिकायत दर्ज कर सकती है।

हालांकि ये सभी कानून महत्वपूर्ण और ज़रूरी हैं पर सच्चाई यह है कि अक्सर सार्वजनिक जगहों पर होने वाली हिंसा का रिपोर्ट दर्ज नहीं की जाती। दिल्ली शहर में किए गए शोध से पता चला कि प्रत्युत्तर देने वाली 1000 महिलाओं में से केवल 10 प्रतिशत ने पुलिस में हिंसा की रिपोर्ट दर्ज कराई थी यानी अधिकांश समय हिंसा की वारदात को दबाकर रखा जाता है। उदाहरण के लिए भीड़-भाड़ वाली बस और सार्वजनिक जगहों पर होने वाली हिंसाएं अक्सर अज्ञात होती हैं जिनमें अपराधी को पहचानना मुश्किल होता है। उसी तरह अंधेरी, सुनसान जगहों पर हिंसा का सामना होने पर औरत वहां से सुरक्षित निकल जाना चाहती है और कुछ भी ठोस या पुख्ता सबूत न होने पर वह पुलिस के पास जाने से हिचकिचाती है।

रिपोर्ट दर्ज न कराने के पीछे कुछ अन्य कारण भी हैं— जैसे अपराधी का कुछ घंटों में ज़मानत पर छूट जाना, न्यायिक प्रक्रिया में लगने वाला लम्बा समय और दोषी को कुछ महीनों की सज़ा और मामूली जुर्माना अदा करके रिहा होकर आज़ादी से घूमना। यह सब औरत को और अधिक अरक्षित और कमज़ोर महसूस कराता है।

इसके अलावा आज भी पुलिस थाने में रिपोर्ट दर्ज कराना एक आसान प्रक्रिया नहीं है— महज़ एक एफआईआर लिखवाने के लिए औरतों को अपनी 'नैतिकता' और 'इज़्ज़त' से जुड़े अटपटे सवालों का जवाब देना पड़ता है।

एक दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि हिंसा से अधिक औरतों को हिंसा का डर परेशान करता है जिसके नतीजतन उनका आत्म-विश्वास डगमगा जाता है और वे सार्वजनिक जगहों पर आने-जाने से कतराने लगती हैं। वे हिंसा से बचने के लिए भी कई तरीक़े निकालती है जैसे रात होने पर कुछ खास जगहों, सड़कों पर न जाना, अकेले व रात में बाहर निकलने से बचना इत्यादि। परिवार भी घर की औरतों व लड़कियों को सुरक्षित रखने के इरादे से उन पर अनेक अंकुश लगा देते हैं।

कहने के मायने यह हरगिज़ नहीं है कि पुलिस या कानून की कोई ज़रूरत नहीं है। सच तो यह है कि पुलिस और निगरानी बेहतर हो जाने पर औरतों को यौन हिंसा की रिपोर्ट करने का हौसला मिल जाएगा। परन्तु आकड़ों में बढ़ोत्तरी होना अपराध बढ़ने की सही निशानी नहीं है।

एक नए कानून के बनने या पुराने कानून में संशोधन होने से या फिर विभिन्न प्रकार की हिंसाओं पर जानकारी और चेतना फैलाने वाले अभियानों से हिंसा की रिपोर्टिंग में बढ़त होगी और लोग कानून की मदद लेने के लिए आगे आएंगे। परन्तु कानून व प्रक्रियाओं की जानकारी के साथ-साथ लोगों का न्याय कार्यान्वयन प्रणाली व आपराधिक न्याय ढांचों पर यह भरोसा भी बहुत ज़रूरी है कि उन्हें कम समय में उचित न्याय मिलेगा।

लिहाज़ा आज औरतों की सार्वजनिक जगहों पर सुरक्षा के लिए बहु-पक्षीय प्रयास करने होगे जिसमें कानूनी तथा अन्य तरीक़े शामिल हों। सशक्त प्रभावशाली व बेहतर कानून के साथ-साथ उनका कम समय में उपयुक्त कार्यान्वयन भी ज़रूरी है। पुलिस को भी औरतों के साथ संवेदनशीलता से व्यवहार करना होगा जिसमें उनके पूर्वग्रह शामिल न हों। यह समझना होगा कि उन्हें व्यक्तिगत नज़रिये और पूर्वग्रह उनके काम के रास्ते में न आएं।

अंत में यही कहना होगा कि पुलिस, न्यायपालिका और कानूनी तंत्र एक ही सामाजिक-सांस्कृतिक ढांचे का अभिन्न अंग हैं। किसी भी सतत व दीर्घकालीन सामाजिक बदलाव के लिए इन दोनों के बीच तालमेल, समन्वय व इच्छाशक्ति होना बहुत ज़रूरी है।

कल्पना विश्वनाथ *शोधकर्त्ता हैं जो कई वर्षों से 'महिलाओं के लिए समावेशी शहर निर्माण' के मुद्दे पर कार्यरत हैं।*